Volume-8, No. 2 Aug.-2021, pp. Hin.33-42

स्वतन्त्रता के पश्चात पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं का सुदृढ़ीकरण में नेतृत्व

डॉ0 दानवीर, शोध निर्देशक
राजनीति विज्ञान विभाग
एस0डी0 कॉलेज, मुफ्फरनगर उत्तर–प्रदेश भारत।
श्री लोकेन्द्र कुमार, शोध छात्र
राजनीति विज्ञान विभाग

प्रस्तावना
अतः सूक्ष्म दृष्टि से देखने से प्रतीत होता है कि प्राचीन काल से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक भारत में पंचायती राज व्यवस्थात में पूर्ण रूप से उथल–पुथल होती रही है, लेकिन स्वातन्त्रोत्तर भारत में भारतीय संविधान में यथावत् स्थान प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी इसके उत्थान व पतन की कहानी पहले की तरह ही दृष्टिगोचर होती रही है। स्वतन्त्रता के बाद भारत में स्थानीय स्वशासन के इतिहास में एक नये युग का उदय हुआ और देश के स्थानीय शासन की बुनियाद नये सिरे से 'शासन के विकेन्द्रीकरण' की नीति का आलम्बन लेकर निर्धारित की गई। अतः संविधान निर्मात्री सभा ने यह तय किया कि देश के पाँच लाख सैतीस हजार गाँवों पर दिल्ली से शासन करना असम्भव है। अतः संविधान निर्मात्री सभा ने लोकतांत्रिक शासन को सफल व सुदृढ़ बनाने के लिए प्रशासनिक कार्यों का विकेन्द्रीकरण करने के लिए योजना बनानी आरम्भ की। उनका विचार था कि यदि हम शासन सत्ता को कुछ ही हाथों या किसी एक ही व्यक्ति के हाथों में केन्द्रित कर देते है तो उससे शासन की स्वेच्छा चारिता और निरंकुशता को बढ़ावा मिल जाता है। इसके कारण ही लोकतन्त्रीय शासन व्यवस्था का गला घुट जाता है। इसके कारण जनता की जो इच्छा शक्ति होती है वह पूर्ण रूप से दब जाती है।
मुख्य शब्द– अनुच्छेद–14, अनुच्छेद 40, अनुच्छेद 246, प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण

भारत विश्व का विशालतम् प्रजातंत्र प्रणाली वाला देश है। पंचायती राज व्यवस्था को भारत में उचित रूप में सहभागी प्रजातन्त्र के आधारशिला की संज्ञा दी गयी है। जयप्रकाश नारायण ने एक बार कहा था कि ''कि यह एक सन्तोष का विषय है कि हमारे देश में पंचायती राज अथवा प्रथमतः प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण के रूप में सहभागी प्रजातन्त्र की आधारशिला रखने की शुरूआत की गयी है। पंचायती राज के बारे में स्वीकार करते हुए एच०डी0 मालवीय ने कहा है कि ''भारतीय संविधान में पंचायत के विचार को संलग्न करना अत्यधिक, महत्व की घटना थी। जिसका राज्य की बनावट पर बड़ा सुदूरगामी प्रभाव होने वाला था।''

26 जनवरी 1950 को नवनिर्मित संविधान प्रवर्तित हुआ और संविधान के द्वारा राज्यों की कार्यसूची के अन्तर्गत स्थानीय स्वशासन को रखा गया।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में कहा गया है कि ''राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठायेगा और उनको ऐसे अधिकार व शक्तियाँ प्रदान करेगा, जिसके द्वारा उन्हें स्वायत्त शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने के योग्य बनाने के लिए आवश्यक हो।'' संविधान के अनुच्छेद 246 (3) ने देश के प्रत्येक राज्य विधान सभाओं को यह अधिकार प्रदान कर रखा है कि ये स्थानीय शासन की सरकार से सम्बद्ध व्यवस्थाओं के लिए कानून पारित करें।

प्राचीन काल में पंचायतों या अन्य प्रकार के स्थानीय शासनों को राज्य सरकार या प्रशासन का एक अभिकरण मात्र समझा जाता था, परन्तु पंचायती राज को वर्तमान भारत में लोकतन्त्र के विकास के लिए एक प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाना अत्यन्त आवश्यक हो गया है। पंचायती राज का अभिप्राय होता है, एक शासन पद्धति। यह ग्राम पंचायतों का जाल सा है, इसे ऊपर से नीचे देखे तो यह पंचायतों से निकल रहा एक अंग होता है, जो बढ़कर राष्ट्रव्यापी हो रहा है। इसका आरम्भ सार्वलौकिक या कम से कम सहमति होता है। इसमें कोई भी राजनैतिक शास्त्रार्थ को गुंजाइश नहीं होती है। एक नये रूप में पंचायती राज का अर्थ निकलता है कि परस्पर विचार विमर्श के आधार पर शासन स्वीकृति व उनकी सर्वसम्मति। पंचायती राज प्रशासन की एक

वह परिवर्तन करने वाली पद्धति होगी। जिसके माध्यम से प्रशासनिक अधिकारियों का विकेन्द्रीकरण होगा। उसके द्वारा शासन के विभिन्न अभिकरणों की कार्य पद्धतियों में समायोजन होगा। प्रशासन और अधिक उत्तरदायी बनेगा और ग्रामीण जनता को शासन में भाग लेने का अवसर प्राप्त होगा। पंचायती राज प्रशिक्षण देकर नेतृत्व तैयार करने तक ही सीमित नहीं माना जा सकता और न ही सामुदायिक विकास में एक सहायक मात्र माना जायेगा, बल्कि सर्वोच्च कार्यक्रम के एक मुख्य अंग के रूप में हमारे सामने आता है।

पं० जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में ''पंचायतें प्रजातंत्र की प्रथम पाठशाला होती है। इसके द्वारा ग्रामीण व्यक्ति प्रजातंत्र की शिक्षा ग्रहण करते है और सहिष्णुता का पाठ पढ़ते है तथा एक दूसरे के दृष्टिकोण को समझने की कला सीखते है। इसके द्वारा उन सभी में उत्तरदायित्व और स्वालम्बन की भावना जागृत होती है। इसलिए देश के नागरिक प्रजातंत्र का पहला पाठ पंचायतों में पहले सीखतें है। पंचायते प्रशासन न्याय तथा ग्रामीण सुरक्षा के सभी काम करती है।''

भारत सन् 1947 को पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हुआ तथा स्वतन्त्रता के बाद ही भारत में पंचायती राज ग्रामीण विकास की दिशा में अनेक उल्लेखनीय कार्यक्रम आरम्भ होने लगें। भारत में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में पंचायती राज की स्थापना का प्रयास एक सार्थक प्रयास था। इसी प्रकार सामुदायिक विकास कार्यक्रम का आरम्भ सन् 1952 में गाँधी जी के जन्म पर 2 अक्टूबर से आरम्भ हुआ। तथा पंचायती राज की स्थापना सबसे पहले राजस्थान राज्य में प्रारम्भ हुई।

2 अक्टूबर सन् 1959 में राजस्थान विधानमण्डल ने सर्वप्रथम पंचायत समिति और जिला परिषद् अधिनियम पारित किया और इनके क्रियान्वयन में 2 अक्टूबर सन् 1959 को भारत के सर्वप्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज व्यवस्था का प्रारम्भ कर ग्रामीण विकास के पहले चरण की शुरूआत प्रारम्भ की।

भारत की अत्यधिक जनसंख्या हमेशा से ही गाँवों में रहती आई है। आज के दौर में भी लगभग 3/4 जनसंख्या भारत के गाँवों में ही निवास कर रही है। भारत को इसलिए ही ग्रामीण प्रधान देश कहा जाता है। भारत में गाँवों का संगठन, व्यवस्था तथा प्रशासन का कार्य ग्राम पंचायतें ही शुरू से करती रही हैं। गाँवों की पंचायते ही लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था एवं संगठन की पूर्ण रूप से आधारशिला होती रही हैं।

प्राचीन काल से ही भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था में पंचायतों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। अंग्रेजी साम्राज्य स्थापित होने तक भारत की ग्रामीण पंचायतें सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक गतिविधियों को संचालित व नियंत्रित करती रही हैं।

अंग्रेजों ने अपनी राजनैतिक पकड़ को सुदृढ़ करने के लिए भारत में ग्राम पंचायतों को धीरे–धीरे मृत प्राय करना आरम्भ कर दिया था। अंग्रेजों ने आर्थिक शोषण करने के लिए भारत को आधुनिकता, औद्योगीकरण और नगरीकरण का रूप दिया। इसी कारण गाँवों की अर्थव्यवस्था पूर्ण रूप से डगमगाने लगी। जिसके फलस्वरूप भारतीय ग्राम और सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं से ग्रसित होने लगे। ग्राम पंचायतों के पूर्ण महत्व का महात्मा गाँधी जी को पूर्ण ज्ञान था, इसके लिए ही महात्मा गाँधी जी ने पंचायतों के द्वारा ही राजनैतिक और आर्थिक विकेन्द्रीकरण करने पर अधिक जोर दिया था। इसलिए वे सभी गाँवों में ग्रामीणों की राष्ट्र के सभी क्षेत्रों में सहभागिता को स्थापित करना चाहते थे। महात्मा गाँधी के जोर देने के कारण ही स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने पुनः ग्राम पंचायतों को ग्रामों के पुनरूत्थान करने का एक महत्वपूर्ण साधन अपनाया था।

इसी प्रकार पंडित नेहरू का भी मानना था कि वास्तव में बदलाव गाँव के अन्दर से ही आता है तथा यह गाँवों में रहने वाले व्यक्ति के माध्यम से ही आता है और यह कही भी बाहर से थोपा नहीं जा सकता है।

पंचायती राज की अवधारणा भारत में कोई नई अवधारणा नहीं है लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में इसके उद्देश्य ज्यादा नये एवं महत्वपूर्ण हो चुके हैं। सामाजिक न्याय की अवधारणा को वास्तविक स्वरूप प्रदान करने के लिए पंचायती राज व्यवस्था जिन उद्देश्यों को लेकर आगे बढ़ी इनमें एकता और विकास दो महत्वपूर्ण बिन्दु थे।

15 अगस्त 1947 में आजादी प्राप्त होने के बाद ''हमारे संविधान के प्रमुख शिल्पी डॉ० अम्बेडकर तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं ने न केवल महिलाओं की समान स्थिति को स्वीकार किया बल्कि उनके अपने समान अधिकार भी सुनिश्चित किये और मूलभूत अधिकारों के अध्याय में लिंगों की समानता (भारतीय सविधान, अनुच्छेद–14) निर्धारित की गयी। अतः यह समझा गया कि यदि कोई भी व्यक्ति किसी भी कानून को जो जाति, धर्म, लिंग वर्ग और जन्म स्थान आदि के आधार पर पूर्णतः भेदभाव करेगा वह संविधान के नियम के विरूद्ध समझा जायेगा (भा०सं० अनु० 15) तथा इसी के साथ–साथ हमारे संविधान में बिना

झिझक के महिलाओं को वोट देने का अधिकार प्रदान किया गया। क्योंकि भारत आजाद होने से पहले महिलाओं को वोट देने का अधिकार प्राप्त नहीं था तथा सबसे पहले महिलाओं को वोट देने का अधिकार 1921 में मुम्बई में और इससे पहले महिलाओं को मद्रास में 1920 में वोट देने का अधिकार प्रदान किया गया था।

हमारे लिए पंचायती राज व्यवस्था कोई नई व्यवस्था नहीं है। लेकिन यह व्यवस्था बहुत पुराने समय से प्रारम्भ होती आ रही थी। इसलिए महात्मा गाँधी ने कल्पना की थी कि आजादी के बाद इस व्यवस्था को पुनः दोबारा सक्रिय कर पिछड़े व उपेक्षित वर्गों को सत्ता सौपी जाए, तथा आजादी प्राप्त होने के बाद विशेषज्ञों ने काफी सोचने के बाद पंचायती राज व्यवस्था को लागू करने का निर्णय लिया। और इसी आशय को देखने के बाद बलवंत राय मेहता सीमित का गठन 1955 में किया गया। तथा इसी समिति की सिफारिशों के आधार पर तत्कालीन प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने दो अक्टूबर 1959 को गाँधी जयन्ती के अवसर पर राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज व्यवस्था का विधिवत् उद्घाटन किया गया।

लेकिन इन सभी विचारों को मानते हुए यह देखा गया पहले हमारे देश में महिलाएँ अपेक्षाकृत कम शिक्षित थी। इसी कारण वे हमेशा भागीदारी से वंचित रही। अतः यही कारण था कि हमारी राष्ट्रीय विकास योजनाओं में कभी भी तेजी नहीं आ पायी जो एक विकसित और लोकतांत्रिक राज्य की श्रेणी में आने वाले देश के लिए आवश्यक है।

इसका पूर्णतः कारण रूढ़िवादिता और अशिक्षा हैं। इसी समय हमारे देश के लिए एक ऐसा सूत्र प्राप्त हुआ जिससे कम पढ़ी लिखी लेकिन सक्षम, समझदार व जागरूक महिलाओं को सत्ता में भागीदारी का पूरा अवसर मिल सकें। और इसके साथ ही मध्य प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान आदि राज्यों में पंचायत व्यवस्था में महिलाओं को पूर्ण रूप से शामिल किया गया इसी के साथ ही जनपद पंचायतों व जिला पंचायतों में भी महिलाओं की भागीदारी से उनकी आजादी व जागरूकता में तेजी आने लगी।

''हमारे देश में स्वतन्त्रता के बाद ग्राम पंचायतों की महत्ता को बहुत अधिक बढ़ावा मिला जिसके कारण हमारे देश में बलवंत राय मेहता कमेटी (1958) की सिफारिशों के आधार पर त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू की गई तथा इस कमेटी ने महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचायतों में शामिल करने के लिए अलग कानून बनाये तथा इसके माध्यम से ही महिलाओं के विकास के लिए किया गया दस्तावेज (1985) में स्वीकार किया गया है।''

महिलाओं की भागीदारी के साथ–साथ ग्राम पंचायत समितियों और जिला परिषदों के अध्यक्षों के पदों की कुल संख्या के कम से कम एक तिहाई पद महिलाओं के लिए आरक्षित कराये गये हैं। कमला भसीन और तिहत सईद खान अपनी पुस्तिका 'नारीवाद' में भारतीय परिप्रेक्ष्य में नारीवाद की परिभाषा को इस प्रकार से परिभाषित किया है कि ''समाज में काम के स्थान और परिवार में होने वाले स्त्रियों के दमन व शोषण के प्रति चेतना और स्त्रियों व पुरूषों द्वारा इन परिस्थितियों को बदलने की दिशा में जागरूक सक्रियता ही हमारा नारीवाद हैं। अतः इसका अर्थ यह माना गया कि वर्तमान में नारीवाद घर के बाहर व घर के भीतर दोनों ही जगह स्त्रियों के लिए सम्मान व समानता पाने का और जीवन व शरीर पर स्वयं के नियंत्रण व अधिकार का संघर्ष है।''

गाँधी जी ने स्त्रियों की राजनैतिक क्षेत्र में उपयोगिता को स्वीकार करते हुए कहा कि मतदान का हक स्त्रियों को भी होना चाहिए, और इन्हें समान कानूनी दरजा, आवश्यक मिलना चाहिए। महात्मा गाँधी जी ने स्त्रियों का स्थान पुरूष के मुकाबले बहुत ऊँचा माना है तथा उन्होंने कहा था कि ''स्त्री और पुरूष में चरित्र की दृष्टि में स्त्री का स्थान ज्यादा ऊँचा है क्योंकि स्त्री आज भी त्याग, तपस्या, नम्रता, ज्ञान, श्रद्धा व मूक की मूर्ति है। अहंकार की दृष्टि से भले ही पुरूष यह माने कि स्त्री की अपेक्षा उसका ज्ञान ऊँचा है लेकिन स्त्री की स्वाभाविक सूझबूझ के कारण इस ज्ञान से सही सिद्ध हुई है क्योंकि राम के पहले सीता और कृष्ण के पहले राधा का नाम उल्लेख अकारण नहीं हैं। उसका भी एक उचित कारण है।''

अतः कहा जा सकता है कि हमारे देश में ऐसी कामकाजी महिलाओं के प्रति आम आदमी का रवैया सहृदयतापूर्ण नहीं है घर और बाहर महिलाएँ दोहरे बोझ का शिकार प्रतीत होती है। संपत्ति में जो उन्हें अधिकार प्राप्त हुए है। उस तक उनके हाथ नहीं पहुँचते इसलिए महिलायें दोयम दर्जे की स्थिति में हैं। पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से उन्हें उचित प्रशासनिक तथा वित्तीय अधिकार और दायित्व सौपे गए हैं। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी केवल लोकतांत्रिक प्रक्रिया में राजनैतिक सहभागिता के लिए ही आवश्यक नहीं बल्कि महिलाओं के विकासात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु भी जरूरी है। ''ऐसा नहीं है कि इससे पहले महिलाओं के लिए संविधान में कोई प्रावधान न हुए हो। बल्कि भारत के संविधान निर्माता महिलाओं की उन्नति एवं उत्थान के महत्व को

समझते थे। सबसे पहले इन्होंने संविधान में मूल अधिकारों के अन्तर्गत यह विशेष प्रबन्ध कर दिया था कि कानून के सामने महिलाओं और पुरूषों दोनों के पूर्णतः समान समझा जाएगा और किसी के साथ भी लिंग, धर्म जाति, भाषा आदि किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा। हमारे संविधान में समानता का मूल अधिकार आस्था का एक आलेख हैं।

अतः देश के चहुमुखी विकास के लिए ग्रामीण क्षेत्र का पर्याप्त विकास होना बहुत आवश्यक होता है। इस उद्देश्य के लिए ही स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही ग्रामीण क्षेत्र के सर्वांगीण विकास हेतु प्रयास आरम्भ किये गये। इन क्षेत्रों के विकास में स्थानीय लोगों की भागीदारी बहुत परिणाम देती हैं। इसी कारण से ग्रामीण विकास में जन सहभागिता प्राप्त करने एवं अधिकार व शक्तियों के प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण हेतु सलाह देने के उद्देश्य से जनवरी 1957 में श्री बलवंतराम मेहता समिति की स्थापना की गई।

इस समिति ने 24 नवम्बर 1957 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें सत्ता के विकेन्द्रीकरण पर बल देते हुए देश में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की सिफारिश की गई। इन सिफारिशों की क्रियान्वित में 2 अक्टूबर, 1959 को सर्वप्रथम राजस्थान में नागौर जिले में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा वर्तमान त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन किया गया।

इसी कारण महात्मा गाँधी के स्वपन को पूरा करने के लिए पंचायती राज का एक नया कदम उठाया गया। राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमंत्री स्वर्गीय श्री मोहनलाल सुखाड़िया लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के प्रबल समर्थक थे। इसी समय राजस्थान के बाद 11 अक्टूबर 1959 को आन्ध्रप्रदेश में भी त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को लागू किया गया। त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था में ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायतें, ब्लॉक स्तर पर पंचायत समितियाँ एवं जिला स्तर पर जिला परिषदें गठित की गई। पंचायतों की व्यवस्था के लिए पहले से ही राजस्थान पंचायत अधिनियम 1953 को लागू किया गया तथा इसी राज्य में पहले बार ग्राम पंचायतों हेतु चुनाव फरवरी 1954 में सम्पन्न हुये। लेकिन 1959 में पंचायत समितियों और जिला परिषदों की स्थापना के लिए राजस्थान पंचायत समिति और जिला परिषद् अधिनियम 1959 बनाया गया। इसी अधिनियिम के आधार पर त्रिस्तरीय पंचायती राज संस्थाओं हेतु प्रथम चुनाव 1959 में सम्पन्न हो गये। सभी चुनावों के बाद प्रदेश में पहली ''महिला जिला प्रमुख श्रीमती नगेन्द्र बाला को कोटा जिले से चुनी गई है।

इसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं को आगाज तो हो गया था परन्तु इसी व्यवस्था में बहुत अधिक कमियाँ भी हो रही थी जिनके कारण यह सही रूप से लागू नहीं हो पा रही थी और यह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सही दिशा में नहीं जा पा रही थी। बहुत लम्बे समय तक इन संस्थाओं के चुनावों में अव्यवस्था बनी रही, इसी कारण दूसरे तरफ महिलाओं एवं पिछड़े वर्गों को सत्ता में प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाया। इसका एक मुख्य कारण सभी राज्यों में छिन्न–भिन्न कानून का होना तथा इन सभी पर केन्द्र का ठीक प्रकार से नियंत्रण नहीं हो पाना भी रहा। लेकिन इसी के साथ–साथ एक प्रमुख कारण यह भी रहा कि भारतीय समाज को पुरूष प्रधान समाज माना गया इसी कारण ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति बहुत ठीक नहीं मानी गई थी और महिलाओं को शिक्षा नाममात्र की ही प्रदान की गई थी। इसी कारण से पंचायतों में महिलाओं की भूमिका के बारे में सोचना भी एक–मात्र सपने के समान हो गया था। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में पुरूष प्रधान होने के कारण पंचायतों में कुछ प्रभावशाली जाति को पुरूषों की प्रधानता ही प्रभावी मानी जाती थी। इसी कारण से महिलाओं का प्रतिनिधित्व तो शून्य के मात्र ही माना जाता था। अतः संविधान के अन्तर्गत ग्राम पंचायतों के गठन का नीति निर्देशक तत्व सुनिश्चित होते हुए भी ये संस्थाएं उपेक्षित ही रही। अतएवं इन सभी को संवैधानिक दर्जा देने की आवश्यकता को अनुभव किया गया। इसी कारण सन् 1989 में 64वें संविधान संशोधन के रूप में एक नया विधेयक लाया गया लेकिन किन्हीं कारण से वही पारित नहीं हो पाया। अन्ततः संविधान के 73वें संशोधन अधिनियम द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया।

भारत में सरकार का बुनियादी दृष्टिकोण सामाजिक क्षेत्र में कल्याणकारी नीतियों के तहत महिलाओं को सक्ष्म बनाने का रहा है। पंचवर्षीय योजनाओं में 1974 तक की सभी योजनाओं में कल्याणोन्मुखी पहलु पर पूर्णतः बल प्रदान किया गया। पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान महिलाओं के कल्याण के बजाय उनके विकास के बारे में एक अलग अध्याय को जोड़ा गया। इसके द्वारा महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार के उपायों को शामिल किया गया। सातवीं पंचवर्षीय योजना में महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने तथा उन्हें राष्ट्रीय विकास की प्रमुख धारा में शामिल करने का लक्ष्य रखा गया। और आठवीं पंचवर्षीय योजना में अनेक

विशेष कार्यक्रमों को तैयार करने की आवश्यकता को महसूस किया गया ताकि विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे विकास के लाभों को महिलाओं तक पहुँचाया जा सके। ताकि महिलाओं का पूर्णरूप से विकास हो जाये।

महिलाओं को प्रदत्त संवैधानिक एवं कानूनी अधिकारों से सम्बद्ध मामलों पर निगरानी रखने के लिए एक राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गयी। और पंचायती राज संस्थाओं को अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए उन्हें संविधान में स्थान प्रदान कर दिया गया। इसी उद्देश्य से एल०एम० सिंधवी समिति की सिफारिश पर 73वाँ संविधान संशोधन कर पंचायती राज संस्थाओं को संविधान के भाग नौ में स्थान प्रदान कर दिया गया।

73वें संविधान संशोधन के बाद सभी राज्यों ने अपने–अपने पंचायती राज अधिनियमों में संशोधन कर उसे 73वें संविधान संशोधन के अनुरूप तैयार किया गया। राजस्थान सरकार ने पंचायती राज से सम्बन्धित पूर्व के दोनों अधिनियमों (पंचायत राज अधिनियम 1953 को निरस्त कर 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1993 के परिप्रेक्ष्य में एक और नया पंचायती राज अधिनियम 1994 में तैयार करके उसे 23 अप्रैल 1994 से सम्पूर्ण राज्य में लागू कर दिया गया। तथा इस 73वें संविधान संशोधन में पंचायतों के चुनाव प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद कराने का अनिवार्य प्रावधान रखा गया। तथा इस अधिनियम में यह भी प्रावधान रखा गया कि जो पंचायतें यह अधिनियम के बनने से तुरन्त पहले बनी वे अपना कार्यकाल पहले पूर्ण करेगी इसी कारणवश कुछ जगह 1994 में कुछ जगह 1995 में और कुछ जगह 1996 में चुनाव सम्पन्न कराये गये। तथा उड़ीसा में तो 1997 में पंचायत चुनाव हुए। पंचायत चुनावों में इसी बार से महिलाओं को चुनाव में भागीदारी लेने का उत्साह देखने को मिला। इसी कारण से पंचायत चुनावों में लगभग पूरे देश में मतदान का लगभग प्रतिशत 80 से 90 प्रतिशत तक देखने को मिला। तथा इसी समय महिलाओं के लिए पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण ने उनकी भागीदारी को अनिवार्य कर दिया गया। अतः उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो गई और इसका परिणाम भी पूर्णतः सकारात्मक रहा।

73वें संविधान संशोधन में संविधान के भाग 9 में जो भाग जोड़ा गया इसका मुख्य शीर्षक ''पंचायत'' से था इसके द्वारा अनुच्छेद 243 में पंचायतों से सम्बन्धित प्रावधान किये गये है, जिसमें 154 उप–अनुच्छेद जोड़े गये हैं। इस संशोधन में महिलाओं, अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए अनुच्छेद 243 घ में एक तिहाई स्थान आरक्षित किये गये हैं। इसमें राज्य निर्वाचन आयोग व राज्य वित्त आयोग के गठन के उपबन्ध भी किये गये हैं। पंचायतों को सुदृढ़ करने के उद्देश्य के लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 26 मई, 1997 को सार्वजनिक वितरण व्यवस्था सहित 15 विभागों को पंचायतों के अधीन कर दिया गया। प्रदेश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली, लघु सिंचाई, सहकारिता, कृषि, लघु उद्योग, पेयजल, मत्स्य एवं पशुपालन, बेसिक शिक्षा, ग्रामीण अभियन्त्रण सेवा, पंचायत राज युवाकल्याण, ग्रामीण आवासीय सामान्य स्वास्थ्य और स्वच्छ ग्रामीणता आदि सभी अब पंचायतों के अधीन होंगे। सभी जुड़े विभागों के जिलों के प्रमुख अधिकारी गण अब पंचायतों के अधीन माने जायेंगे। प्रदेश शासन द्वारा पंचायतों को अधिकार दिए जाने से महात्मा गाँधी जी की ग्राम स्वराज्य की कल्पना साकार होने की ओर अग्रसर होंगे। पंचायतों को अधिकार दिये जाने से जन प्रतिनिधियों को जन–सेवा करने की अपूर्व शक्ति प्रदान की गयी है। ग्राम स्वराज्य की पृष्ठभूमि में पंचायतों की स्थापना के आरम्भिक वर्षों में सरपंच की केन्द्रीय भूमिका होना रहा तथा सरपंच के द्वारा ग्राम पंचायतों की सभी गतिविधियों को केन्द्रीयकृत करते हुए निर्णय निर्माण में आम व्यक्ति की भूमिका को कम किया गया और इसी बात को ध्यान में रखते हुए ग्राम स्वराज को लागू किया गया। जिसके द्वारा पंचायतों की निर्णय निर्माण में आम व्यक्ति की भागीदारी को पूर्णतः सुनिश्चित किया गया। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर भारतीय संविधान में ग्यारहवीं अनुसूची जोड़कर सामाजिक न्याय एवं आर्थिक निकाय से सम्बन्धित 29 विषय योजना निर्माण एवं क्रियान्वयन हेतु पंचायतों को सुपुर्द किये गये। प्रमुख रूप से जिन विभागों के महत्वपूर्ण कार्य किये गये है। उनमें आदिम जाति एवं अनुसूचित जाति कल्याण विभाग, कृषि विभाग, खनिज संसाधन विभाग, खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति एवं संरक्षण विभाग, खेलकूद एवं युवक कल्याण विभाग, ग्रामीण विकास विभाग, ग्रामोद्योग विभाग, पशुधन, दुग्ध विकास और विकास विभाग, राजस्व विभाग, लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग स्कूली शिक्षा विभाग, वित्त विभाग, समाज कल्याण विभाग और श्रम विभाग एवं जनशक्ति नियोजन विभाग, प्रमुख है। उल्लिखित सभी विभागों ने तीनों स्तरों की पंचायतों को अलग–अलग तरह की शक्तियों एवं उत्तरदायित्वों से परिवेष्ठित किया है।''

प्रदेश में पंचायतों को 73वें संविधान संशोधन की भावनाओं के अनुरूप पुनगठित करने और उन्हें साधन सम्पन्न बनाने के लिए उत्तर प्रदेश पंचायत विधि

(संशोधन) अधिनियम, 1994 के अन्तर्गत प्रमुख रूप से निम्नलिखित व्यवस्थाऐं की गई।

1. तीनों स्तरों की पंचायतों की संरचना और उनके संगठन में आवश्यक संशोधन।
2. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों के लोगों और महिलाओं के लिए तीनों स्तरों पर सदस्यों और सभापतियों के स्तर पर आरक्षण की व्यवस्था।
3. पंचायतों द्वारा अपने विकास की योजनाएँ बनाने तथा इनको लागू करने का अधिकार भी प्रदान किया गया।
4. पंचायतों का कार्यकाल पाँच वर्ष निर्धारित किया गया।
5. सभी पंचायतों की अपनी–अपनी निधि की स्थापना की गई।
6. सरकार द्वारा स्थापित 'राज निर्वाचन आयोग के अधीक्षण, निर्देशन और नियन्त्रण के अधीन त्रिस्तरीय पंचायतों की निर्वाचन नामावली को तैयार कराकर उनके अनुसार सभी निर्वाचनों को सम्पन्न कराना।
7. सभी स्तर की पंचायतों की शक्तियों, कार्य और उत्तरदायित्वों का विस्तार कर उनका निर्धारण करना।
8. पंचायतों की वित्तीय स्थिति का पुनर्विलोकन करने तथा पंचायतों के बीच फीस, कर आदि के शुद्ध आगामों के वितरण को नियमित करने वाले सिद्धान्तों को तय करने के सम्बन्ध में राज्यपाल को सिफारिश देने के लिए 'राज्य वित्त आयोग' का गठन करना।
9. ग्राम पंचायतों को विभिन्न प्रकार के कर व वित्त अधिकार को प्रदान करना।
10. प्रदेश की त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान करना।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में पहला प्रयास 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' का शुभारम्भ था। जिसका प्रारम्भ 2 अक्टूबर 1952 से हुआ था। और इस कार्यक्रम के बारे में योजना आयोग का यह मत था कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम को इस रूप में विकसित करना सरल होगा कि नगरीय और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में सामाजिक कल्याण के विकास का बीज केन्द्र सिद्ध हो सके। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ''अधिकतम लोगों का अधिकतम कल्याण'' करना था।

इस सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रमुख कार्य बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाना, कृषि उपकरण की व्यवस्था करना, कर्मचारियों और कृषकों को प्रशिक्षण प्रदान करना, आवास का प्रबन्ध करना छोटे–छोटे उद्योगों को बढ़ावा देना। लोक स्वास्थ्य सम्बन्ध कार्यक्रमों का प्रबन्ध आदि व्यवस्थाओं को लागू करना प्रमुख उद्देश्य था। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रशासन का उत्तरदायित्व नियमित नौकरशाही को सौंपा गया, परन्तु इसके संगठनात्मक ढाँचे में हेर–फेर करके इसमें कुछ संशोधन कर दिया गया था।

प्रो० रजनी कोठारी जैसे– विद्वानों का मानना है कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम नौकरशाही द्वारा संचालित होने के कारण विफल हो गया। इन कार्यक्रमों के संचालन में ग्रामीण लोगों को भागीदार नहीं बनाया गया। जबकि स्थानीय समस्याओं तथा तत्सम्बन्धी समस्याओं का ज्ञान ग्रामीण जनता को अधिक होता है। ये ही स्थानीय स्तर पर इनका उचित रूप से समाधान कर सकते हैं। नौकरशाही द्वारा संचालित होने के कारण इसमें गाँवों के विकास के बजाय सामुदायिक विकास की मशीनरी के विस्तार पर अधिक बल दिया गया। सरकारी तंत्र के कारण ग्रामीण लोगों की मनोवृत्ति को बदलने की इच्छा की गई। और इसका कारण यह हुआ कि गाँवों की उन्नति के खुद प्रयत्न करने के बजाय ग्रामीण जनता सरकार का मुँह ताकती रह गई।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रभावी रूप ग्रहण न कर पाने के कारण 1957 में बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन गया। दिसम्बर 1957 में प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में समिति ने सामुदायिक विकास कार्यक्रम को सफल न होने का कारण लोकप्रिय नेतृत्व का न होना बताया। इस समिति ने यह माना कि गाँवों में लोकतंत्र की स्थापना के लिए सच्चे अर्थों में सत्ता का पूर्ण विकेन्द्रीकरण होना चाहिए। ग्राम प्रधान की भारत में आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामीणों के हाथों में सत्ता रहे। ग्रामीण जनता में इतनी शक्ति हो कि वह स्वयं ही स्वशासन को चला सकें और इस समिति ने इस बात पर बल दिया कि जब भी योजनाएँ बनाई जाए तब ग्रामीण जनता का सहयोग लिया जाए। इसी के कारण प्रत्येक गाँव अपने विकास की जिम्मेदारी स्वयं ही निभायेगा और ग्राम की पंचायत सक्रिय होकर अपने विकास के कार्य में लग जायेंगी।

इस समिति ने माना कि देश के विकास कार्यक्रम प्रशासन के लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के माध्यम से ही सफल हो सकते हैं। इस कारण समिति ने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण पर आधारित त्रि–स्तरीय पंचायत राज को स्थापित करने की सिफारिश की। ये त्रि–स्तर है– ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, मध्य स्तर पर पंचायत समिति तथा शीर्ष स्तर पर जिला परिषद।

इनके साथ ही इन त्रि–स्तरीय पंचायती की सफलता के लिए तीन बिन्दुओं को आवश्यक माना सत्ता का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए, विकेन्द्रीकृत इकाईयों के विकास के लिए पर्याप्त साधन प्रदान करने चाहिए एवं कर्त्तव्य की समझ तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।

सन् 1977 में कांग्रेस के स्थान पर केन्द्र में पदारूढ़ जनता सरकार स्थानीय स्तर के निकायों की शक्तियों एवं कार्यों का विकेन्द्रीकरण करने की इच्छुक थी। इसलिए उसने सुझाव देने के लिए दिसम्बर 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। तथा इस समिति ने अगस्त 1978 में 11 अध्यायों तथा 300 पृष्ठों की एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की।

इस समिति की सबसे महत्वपूर्ण सिफारिश यह थी कि इसने पंचायती राज की द्वि–स्तरीय पद्धति का निर्माण किया। इसमें राज्य स्तर से नीचे विकेन्द्रीकरण का पहला बिन्दु जिला है, जिसमें ग्रामीण विकास के लिए एक आवश्यक उच्च कोटि का तकनीकी ज्ञान उपलब्ध हैं तथा जिला परिषद् के नीचे एक 'मण्डल पंचायत' बनाने का प्रस्ताव किया गया, जिसको अनेक ग्रामों को मिलाकर बनाना था।

अशोक मेहता समिति ने पंचायत राज संस्थाओं को कर लगाने का अधिकार लागू करने की सिफारिश की। इस समिति ने यह भी सुझाव दिया इन संस्थाओं के चुनाव भी राजनीतिक दलों के आधार पर कराने चाहिए। अशोक मेहता समिति ने अपनी सिफारिशों में ग्राम पंचायत के बदले मण्डल पंचायत की स्थापना की सिफारिश की, लेकिन ग्राम पंचायत की समाप्ति तो पंचायत राज की कल्पना की मूल इकाई की ही समाप्ति थी। अशोक मेहता समिति ने देश में पंचायत राज के आकार एवं स्थायित्व के निर्मित वित्तीय एवं प्रशासनिक प्रकृति की विभिन्न सिफारिशे प्रस्तावित की। किन्तु रिपोर्ट को लागू होने से पहले ही जनता सरकार का पतन हो गया। इसके बाद 1980 में सत्तारूढ़ कांग्रेस सरकार ने जनता सरकार के द्वारा बनाये अशोक मेहता समिति की रिपोर्ट राजनीतिक दृष्टि से स्वीकार नहीं की।

प्रभावी विकेन्द्रीकरण के महत्व को अपनाते हुए एवं इसका समर्थन देते हुए तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने ग्रामीण स्थानीय सरकार के पुनःनिर्माण के तरीकों को सुधारने के लिए एक अन्य समिति जी०वी०के० राव की अध्यक्षता में गठित की। राव समिति ने योजना आयोग के परामर्श से रिपोर्ट तैयार की और इस समिति ने प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की एक साहसी योजना की सिफारिश की। इस योजना में जिला स्तर का निकाय केन्द्रीय महत्व को बनाया गया इस समिति का यह मानना था कि सामाजिक न्याय और आर्थिक विकास की प्राप्ति की जिम्मेदारी केवल सरकारी मशीनरी (नौकरशाही) पर नहीं थोपनी चाहिए। लेकिन यह सत्य है कि ग्रामीण लोगों व उनके प्रतिनिधियों को ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों को तैयार करने और उनके क्रियान्वयन में प्रभावी रूप से सहयोगी बनाया जाये। तथा समिति ने यह सिफारिश पेश की कि पंचायत राज संस्थाओं को सहभागी बनाया जाये तथा उन्हें पूरा आवश्यक सहयोग प्रदान किया जाना चाहिए ताकि ये जनता की समस्याओं का निस्तारण कर सके और आवश्यकता पढ़ने पर प्रभावी संस्थाऐं भी बना सकें तथा इन संस्थाओं के नियमित चुनाव भी कराये जाये।

1986 में एल०एम० सिंधवी समिति की रिपोर्ट ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रेरणा से प्रस्तुत की गई। प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की वृद्धि और विकास पर दृष्टिपात करने के बाद सिंधवी समिति ने लगभग विस्मृत ग्राम सभा को पुनः जीवित किया, इसमें एक ग्राम के सभी ग्रामवासियों को सम्मिलित किया जाए तथा इसको 'प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के अवतार' की संज्ञा दी गई। पंचायत राज को समिति ने संवैधानिक दर्जा देने का सुझाव दिया। उसने सुझाव दिया कि भारत के संविधान में एक अलग अध्याय पंचायत राज संस्थाओं की पहचान एवं सम्पूर्णता को बनाये रखने के लिए जोड़ा जाए। ताकि इन संस्थाओं को तार्किक व आधारगत रूप में अनर्तिक्रमणीय बनाया जा सके। इस समिति ने ग्रामों के समूह के लिए न्याय पंचायत की स्थापना का सुझाव प्रस्तुत किया। जहाँ तक पंचायत राज संस्थाओं के चुनावों में राजनीतिक दलों की सहभागिता का प्रश्न रहा इसमें समिति ने स्वयं कोई भी सुनिश्चित अनुशंसा नहीं की। तथा सरकारी निर्णय की अपेक्षा की जो व्यवहारिक हो और सभी राष्ट्रीय दलों की पूर्ण सहमति से लिया गया हो।

वास्तव में अशोक मेहता समिति और अन्य समितियों की सिफारिशें मात्र एक कागजी बनकर रह गयी। आन्ध्र प्रदेश पश्चिमी बंगाल, गुजरात, महाराष्ट्र व कर्नाटक जैसे कुछ राज्यों को छोड़कर और सभी राज्यों में पंचायत राज संस्थाओं के चुनाव नियमित रूप से नहीं कराये गये।

महिलाओं की राजनीति में भागीदारी बढ़ाने के लिए 1988 में राष्ट्रीय परिदृश्य योजना का निर्माण किया गया। इसके द्वारा बुनियादी स्तर की जनतांत्रिक संस्थाओं में महिलाओं के प्रभावपूर्ण अधिकारों के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये गये–

1. महिलाओं के लिए पंचायत से जिला परिषद् के स्तर तक और नगरपालिका में 30 प्रतिशत स्थान

आरक्षित किये जाये जितना भी हो सके दलित आदिवासी व कमजोर वर्गों की महिलाओं का अधिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

2. ग्राम स्तर से लेकर जिला स्तर तक की सभी संस्थाओं के प्रधानों का 30 प्रतिशत आरक्षण और पंचायती राज संस्थाओं के सभी निम्न, मध्य और उच्च स्तरों पर मुख्य कार्यकर्त्ता का एक निश्चित प्रतिशत महिलाओं के लिए आवश्यक रूप से आरक्षित किया जायेगा।

अतः निचले स्तर पर पंचायती राज निर्वाचित क्षेत्रों और सभी कार्यकारी पदों का एक निश्चित प्रतिशत महिलाओं के लिए अनिवार्य करके तथा उन सभी के लिए एक निश्चित संख्या में क्षेत्राधिकार आरक्षित करके प्रभावकारी कदम उठाया जा सकेगा। लेकिन निर्मला देशपाण्डे ने इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया उनका मानना था कि यह महिलाओं के स्तर को ऊँचा उठाने का कोई उचित तरीका नहीं है।

उन्होंने कहा, ''आरक्षण देने का अर्थ है कि महिलाएँ, पुरूषों की तुलना में कुछ न कुछ घटकर है।'' अतः सामान्य जागरूकता को सशक्त बनाया जाना चाहिए तथा अपने देश के आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों को उजागर किया जाना चाहिए, वातावरण ऐसा बनाया जाए, जिसमें इन मूल्यों को उचित महत्व प्रदान किया जा सकें, तभी महिलाएँ स्वाभाविक रूप से आगे आ पायेगी।

सुदृढ़ीकरण का सिद्धान्त के मुख्य प्रतिपादक जॉन लॉक तथा थामस जैफरसन मुख्य थे। यह सिद्धान्त गणतंत्रीय सिद्धान्तों में सबसे अधिक लोकतंत्रीय हैं। इस सिद्धान्त का यह मानना था कि सभी व्यक्ति एक समान है तथा किसी में भी किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करना चाहिए। इसलिए वे सब शासन करने के लिए समान रूप से समर्थ हैं। अतः प्रत्येक महिला के सुदृढ़ीकरण के नेतृत्व को अपने निर्वाचकों के संदेशवाहक के रूप में कार्य करना चाहिए केवल नीति निर्माता के रूप में नहीं सार्वजनिक अधिकारियों के उस ढंग से मतदान करना चाहिए। जैसा कि उनके निर्वाचक चाहते हैं और यह सिद्धान्त इस बात पर जोर देता है कि विधायिकाओं को समाज का प्रतिबिंब होना चाहिए। प्रतिनिधियों को जनता के अभिव्यक्तियों के रूप में स्वीकार किया जाता है और ये अपने क्षेत्र की माँगों की नीति संरचनाओं में बदलते हैं। इस सिद्धान्त का जनसामान्य की बुद्धिमत्ता में गहरा विश्वास है तथा यह सिद्धान्त समानता पर पूर्ण आधारित हैं।

कई सौ वर्ष पहले उदारवादियों ने मांग रखी थी कि जन्म के आधार पर मताधिकार को सीमित ना रखा जाये बल्कि इसका विस्तार करके सभी नागरिकों को समझौते के आधार पर मताधिकार मिलना चाहिए लेकिन आगे चलकर निर्धन वर्गों की तरफ से यह प्रस्ताव रखा गया कि संपदा पर आधारित मताधिकार स्वयं विषमता का सूचक था। अतः समानता के अधिकार को तर्क संगत परिणाम तक पहुँचाने के लिए सभी के लिए समान मताधिकार की माँग को उठाया गया। महिला आरक्षण विधेयक के पीछे यह सिद्धान्त सर्वाधिक सक्रिय प्रतीत होता है।

स्वतन्त्रता पूर्व के काल में महिलाओं के संग्रहित करने में सबसे महत्वपूर्ण कार्य गाँधी जी ने किया। गाँधी जी ने महिलाओं की उदार भावना, उनकी उच्चता तथा नैतिक बल के विकास का आवहान किया तथा महिलाओं ने गाँधी जी की बातों को सुना और अपने बन्द मकानों से निकलकर उनके रचनात्मक कार्यों में योगदान देना आरम्भ कर दिया और इसी के परिणामस्वरूप स्वतन्त्र भारत के संविधान में स्त्रियों को पुरूषों के समान राजनीतिक सहभागिता में बराबर अवसर प्राप्त होने लगे और महिलाओं को राजनीति में जाने का रास्ता मिल गया और उन्होंने कहा कि स्वतन्त्रता प्रत्येक राष्ट्र का और व्यक्ति का जन्म सिद्ध अधिकार है।

देश की आधारभूत प्रतिनिधि संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी से उनके उत्थान में क्रान्ति आयेगी। महिला के उत्थान से समाज में विकास की लहर सी दौड़ने लगती है। महिलाओं की इस भागीदारी का एक महत्वपूर्ण लाभ यह होगा कि उनमें एक ऐसा नेतृत्व तैयार होगा, जो संसद और विधान सभाओं का प्रतिनिधित्व कर सकेगा। महिलाओं सांसदों की सत्तरवीं लोकसभा में संख्या उन्चास है, जो अब तक की सबसे अधिक संख्या है। यद्यपि महिला सांसदों ने संसद में हमेशा सक्रिय और सार्थक भूमिका निभाई है। भारत में महिलाओं की बेहतर जीवन स्तर और समानता प्रदान करने के लिए सामाजिक, आर्थिक संकेतों का विश्लेषण किया जाता है। महिलाएँ इस दुनिया में आधी जनसंख्या की सूचक रही है। शुरूआत में महिलाओं द्वारा किए गए कार्यों को आंकड़ेबद्ध नहीं किया जाता था वैसे तो समाज में कोई भी कार्य महिलाओं के बिना नहीं किया जाता था। परन्तु समकालीन समाज में तकनीकी विकास और प्रौद्योगिक विकास के बाद महिलाओं ने काफी प्रगति की है। चाहे वह समाज के किसी भी क्षेत्र में हो जैसे– कृषि, सामाजिक कार्य, वित्तीय, व्यापार, कारखाने, बीमा शिक्षा का क्षेत्र हो या फिर अधिक उद्यमी महिलाओं का क्षेत्र हो, आज सब जगह महिलाओं ने अपना विशेष स्थान बना लिया है।''

प्रशासनिक सेवाओं में महिलाओं का आगमन किसी भी क्रान्ति से कम नहीं मान सकते समकालीन महिलाओं और पुरूषों की बराबरी को देखा जा सकता है। वही कई मामलों में स्त्री पुरूषों से आगे देखी जा सकती है, जिनमें प्रतियोगिता व शिक्षा सम्बन्धित मामले शामिल हैं। आज के दौर में महिलाओं का जीवन काफी बदल चुका है। प्रीतंभरा प्रकाश द्वारा लिखी पुस्तक लीलावतीज डॉटर्सः द वीमेन साईटिस्ट्स ऑफ इण्डिया में इन्होंने 100 से भी ज्यादा महिला वैज्ञानिकों का उल्लेख किया हैं। बदलते समय में सामाजिक विचारधारा, संस्कारों, मूल्यों और व्यवस्था में भी अनेक प्रकार से बदलाव आया है। अब महिलाओं ने भी अपनी सोच को पूरी तरह से बदल दिया है। आज के दौर में समाज के पुरूष वर्ग भी महिलाओं को आगे बढ़ाने के अवसरों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं तथा महिलाओं को परिवार के सहयोग के साथ रचनात्मकता और भागीदारी में स्त्री पुरूष का अद्‌भुत समन्वय देखा जा सकता है। इसमें महिलाओं की मानसिक सुझबूझ के कारण उन्हें आगे बढ़ने के अवसर प्राप्त हो रहे हैं। इन सभी बदलाव में, साक्षरता, राजनीतिक क्रियाकलापों, न्यायपालिकाओं के महत्वपूर्ण निर्णयों, सूचना क्रान्तियों, मीडिया की सक्रियताओं, समाचार पत्रों के लेखों और विभिन्न घटनाओं पर प्रदर्शित आन्दोलनों ने महिलाओं की जीवन शैली, उनकी सामाजिक स्थिति और उनके सामाजिक स्थान में उल्लेखनीय परिवर्तन किया है।''

आज के दौर में महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि समय आने पर महिलाएँ कोई भी जिम्मेदारी उठा सकती है। अगर समाज के अधिक शिक्षित और सम्पन्न वर्ग में बनने वाले प्रशासक इंजीनियर, पायलट, शिक्षक तथा अन्य क्षेत्रों में जाने वाली महिलाओं की बात छोड़ दी जाए, तब भी ऐसे अनेक उदाहरण है। जहाँ ग्रामीण महिलाओं ने अकेले प्रशासन की जिम्मेदारी संभाली और उसे पूरा किया। महिलाओं की सामाजिक, भूमिका विशेषकर भारतीय समाज में बहुत आवश्यक हैं। महिलाओं को सांस्कृतिक व सामाजिक संस्थाओं का रक्षक माना गया है और यदि महिलायें पिछड़ी है तो सामाजिक व्यवस्था का पिछड़ा रहना आवश्यक है।

पिछले चालीस सालों में भारतीय राजनीतिक अर्थव्यवस्था तथा समाज एक ऐसे परिवर्तन से गुजरा हैं, जिसमें भारतीय शिक्षित महिलाओं ने अपने स्तर तथा अधिकारों के प्रति नयी जागृति को पैदा किया है। ये जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों से समान कोशिश कर रही हैं।

संदर्भ सूचीः

1. जयप्रकाश नारायण, कम्यूनिटेरियन सोसाइटी एण्ड पंचायती राज, वाराणसी, इन्द्रप्रस्थ प्रेस, पृ०सं० 73
2. जयप्रकाश नारायण, कम्यूनिटेरियन सोसाइटी एण्ड पंचायती राज, वाराणसी, इन्द्रप्रस्थ प्रेस, पृ०सं० 73
3. बी० मुखर्जी, कम्यूनिटी डेवलपमेन्ट एण्ड पंचायती राज, दी इण्डियन जरनल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्टेशन, वॉल्यूम 8 नं० 4, अक्टूबर–दिसम्बर 1962, पृ० 579–580
4. पंचायत संदेश, जनवरी 1989, पृ०सं० 15
5. भारतीय नारी : ज्वलनशील मुद्‌दे डॉ० अंजना वर्मा व डॉ० रश्मि सोमवंशी प्रकाशक को ऑपरेशन पब्लिकेशन्स धामाणी मार्केट की गली, चौड़ा रास्ता जयपुर, संस्करण 2017, पृ०सं० 146
6. भारतीय नारी : ज्वलनशील मुद्‌दे डॉ० अंजना वर्मा व डॉ० रश्मि सोमवंशी प्रकाशक को ऑपरेशन पब्लिकेशन्स धामाणी मार्केट की गली, चौड़ा रास्ता जयपुर, संस्करण 2017, पृ०सं० 143
7. इन्दु ग्रोवर और दीप्ति अग्रवाल 'पंचायत और महिलाएँ', कुरूक्षेत्र, अप्रैल 1999
8. क्रिस्टा किल्वेट, इस्टोनिया की संसद, अमर उजाला रूपायन 28 अगस्त 1998, पृ० 2
9. गाँधी जी, स्त्रियाँ और उनकी समस्यायें, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, 1959, पृ० 3
10. लक्ष्य राजस्थान, कांति प्रसाद जैन, महावीर जैन, मनु प्रकाशन, अजमेर 2009, पृ०सं० 49
11. लक्ष्य राजस्थान, कांति प्रसाद जैन, महावीर जैन, मनु प्रकाशन, अजमेर 2009, पृ०सं० 59
12. डॉ० जोशी एवं डॉ० मंगलानी, भारत में पंचायती राज, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2010, पृ०सं० 102
13. ऋतु सारस्वत, राजनीति में महिला नेतृत्व सम्भावना की तलाश, जनवरी, 2009, पृ०सं० 43–44
14. गोपाल सिंह व राजेन्द्र सिंह गौड, आरक्षण नीति पर पुर्न विचार की जरूरत, अमर उजाला, 20 अगस्त, 1994
15. अग्रवाल, यू०सी० 'उत्तर प्रदेश में पंचायती राज व्यवस्था का बदलता स्वरूप', एक समीक्षा, प्रतियोगिता दर्पण, मई 2004, पृ०सं० 1884
16. ड्राफ्ट आउट लाईन ऑफ द सेकण्ड फाइव ईयर प्लान, नई दिल्ली, 1956, पृ०सं० 47

17. कोठारी रजनी, पॉलिटिक्स इन इण्डिया, ओरियंट लागमंस, नई दिल्ली, 1970, पृ०सं० 95
18. कोठारी रजनी, पॉलिटिक्स इन इण्डिया, ओरियंट लागमंस, नई दिल्ली, 1970, पृ०सं० 178
19. रिपोर्ट ऑफ दी कमेटी ऑन एडमिनिस्ट्रेटिव एडजस्टमेन्ट फॉर रूरल डवलपमेन्ट एण्ड पावर्टी एलिविएशन, चेयरमैन, जी०वी० के राव ग्रामीण विकास विभाग, नई दिल्ली, 1985, पृ०सं० 2
20. सिंह, एस०एस० एवं मिश्रा सुरेश, 'लेजिस्लेटिव फ्रेमवर्क ऑफ पंचायत राज इन इण्डिया', इंटलेक्युअल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1993, पृ०सं० 10
21. निर्मला देशपाण्डे, पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी, कुरूक्षेत्र, अंक IV, फरवरी 1989, पृ०सं० 52
22. शुभ्रा परमार, 'नारीवादी सिद्धान्त और व्यवहार, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, 3–6–752 हिमायत नगर, हैदराबाद 500 029 (तेलंगाना), भारत पृ०सं० 134–135
23. मधु राठौड पंचायती राज और महिला विकास, पोइंटर पब्लिशर्स, जयपुर, राजस्थान, 2002
24. शुभंकर बनर्जी, ''महिलाओं की राजनीतिक, सहभागिता का विवाद'', प्रतियोगिता दर्पण / जुलाई / 1997 / 2045